॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

आज हृदय तो मेरा कुछ और ही पुकार रहा है। मैं तो अपने प्रभु से कहा करता हूँ हे परमदेव! तू कल्याण करने वाला है। आज सँसार में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या के हृदय में उस उज्जवलता को दे जो आपने सृष्टि के प्रारम्भ में प्रत्येक वेद मन्त्र द्वारा हमें प्रेरणा दी है। उस प्रेरणा को पुनः से जागृत कर। विधाता! आपने सृष्टि का निर्माण किया और सर्वप्रथम मानव के लिए ज्ञान का स्रोत दिया। उस आनन्द के स्रोत को आज भी दे। किसको दे? महान् पात्रों को दे। आज हमारे हृदय को पवित्र बना जिससे हम सँसार में उज्जवल बनें। विधाता! जब आपकी कृपा होगी तब आपकी दया के पात्र बनेंगे। हे भगवन्! तू दया कर और इतनी दया कर कि हमारी आत्मा के द्वारा कोई दोष न आए। विधाता! जब हमारी आत्मा के द्वारा नाना प्रकार के दोष आ जायेंगे तो हमारा जीवन जीवन, न रहेगा। प्रभु! दया कर।

पूज्यपाद-गुरुदेव

(यज्ञ प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व प्रवचन दिनाँक 7 नवम्बर, 1963)

अंक : 477 समग्र अंक : 552
वर्ष : 40 समग्र वर्ष : 46

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	1
2.	वसु	पूज्यपाद-गुरुदेव	3-17
3.	यज्ञ क्या है	पूज्यपाद-गुरुदेव	18-22
4.	स्वस्तिवाचन		23-27
5.	The chief food on the Moon	पूज्य महर्षि महानन्द जी	28
6.	When the man on earth will be able to see those living beings on the Moon ?	पूज्य महर्षि महानन्द जी	29
7.	पुस्तकों की सूची, सूचना, दान, पुस्तक प्राप्ति के स्थान इत्यादि		30-32

शृङ्गीऋषि बेवसाईट

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के प्रवचनों की अमृतवाणी को जन-जन तक पहुँचाने के उद्देश्य से वैदिक अनुसंधान समिति ने बेवसाईट का शुभारम्भ किया है जिसका पताः

www.shringirishi.in

॥ ओ३म् ॥

वसु

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहां परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस महामना परमपिता-परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि हमारे यहां वैदिक-साहित्य वालम ब्रह्मा वर्णसुतम जब वैदिक-साहित्य में विचार-विनिमय किया जाता है तो उस परमात्मा का नामोकरण वसुन्धरा के नामो से वर्णन किया जाता है और हमारे यहां वैदिक-साहित्य में नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्दों की विवेचनाएं होती रही है। जैसे वसुन्धरा नाम उस परमपिता-परमात्मा का है और वसुन्धरा नाम माता का है, और वसुन्धरा नाम पृथ्वी को माना गया है। मानो जो अपने में अपनेपन में बसा लेता है, उसी का नाम वसुन्धरा के नामो से वर्णन किया जाता है। जैसे परमपिता-परमात्मा इस संसार को अपने में बसा रहा है, तो उस परमात्मा का नाम भी वसुन्धरा के नामो से वर्णन किया जाता है।

वसुन्धरा

वेद-मन्त्र कहता है वसुन्धरा ब्रह्मण ब्रह्मा क्रतम देवा क्या वह जो **परमपिता-परमात्मा वसुन्धरा है** और उसी के गर्भ में हम

सदैव वशीभूत रहते है। याग भी वस्तु है, जैसे माता के गर्भस्थल में हम जैसे शिशु जब विद्यमान होते है तो वह माता अपने में बसाने वाली है, अपने में मानो उसे धारण कर रही है, उसे वसु कहा जाता है। हमारे यहां वसुओं की बड़ी विवेचनाएं होती रही है। देखो वसु का अभिप्राय है वसुन्धरम ब्रह्मा वसु तपराह क्या जो मानव अपने में बसाने वाला है उसका नाम वसु भी कहा गया है। नाना प्रकार के मण्डलों का नाम भी वसु के नामो से वर्णन किया जाता है, इसी प्रकार माता का नाम वसुन्धरा है जो अपने में धारण कर रही है। जिस प्रकार माता का नाम वसुन्धरा है इसी प्रकार पृथ्वी का नामोकरण भी वसुन्धरा के नामो से वर्णन किया जाता है। यह जो पृथ्वी है यह जो वसुन्धरा है जो नाना प्रकार का खाद्य और खनिज-पदार्थों को जन्म देती है और उसी में मानव का जीवन वशीभूत रहता है। यदि वसुन्धरा के गर्भ में बेटा! नाना प्रकार का खाद्य और खनिज-पदार्थ उत्पन्न न होता तो मानव के जीवन का संचालन प्राणी-मात्र नहीं हो सके था। तो इसीलिए उस माता का नाम वसुन्धरा है जो अपने में संसार को बसा रही है। हे! वसुन्धर्म ब्रह्मा वर्णो ब्रह्मा मानो देखो वह परमपिता-परमात्मा वरण करने योग्य है, वह वरणीय है इसीलिए हमारे यहां वरण किया जाता है, परमात्मा को वर लिया जाता है जैसे प्रजा के लिए माता मानो देखो एक पुरुष को वर लेती है या पुरुष मानो देखो एक देवी को अपने में वर लेता है। वरने का अभिप्राय यह है कि वह एक दूसरे में मानो तन्मय हो जाने का नाम वरना है। वरणं ब्रह्मा देखो उसको वरुण कहते है जैसे लोक-लोकान्तरों में बेटा! वसु की विवेचना करते रहे है। वह वसु अपने में मानो देखो जैसे यज्ञों का प्राय वर्णन आता रहता है।

याग वसु है

एक समय बेटा! याज्ञवल्क्य-मुनि-महाराज अपने आसन पर विद्यमान थे तो रेणकेतु मुनि ने उनसे एक प्रश्न किया कि महाराज यह वसु क्या है? उन्होंने कहा **वसु का नाम याग है** यागाम कि यह वसु कैसे याग, कैसे बसाने वाला है। मेरे प्यारे! देखो यदि मानव में याग की प्रेरणा न रहेगी और शुद्ध कामना न रहेगी तो मानव बस नहीं सकेगा क्योंकि मानव में जब शुभ भावना होती है, ना अशुभ कामनाऐं होती हैं तो वह प्रायः अपने में बसता रहता है, वसीभूत रहता है इसीलिए प्रत्येक मानव, प्रत्येक मानव देवम ब्रह्मा देखो प्रत्येक प्राणी-मात्र अथायु का एक समूह कहा जाता है और उसके हृदय में यह सम मानो एक वेदना उत्पन्न होती रहती है और वह जो वेदना है वही उसको ऊंचा बनाता है और वहीं उसको बसाता रहता है। यदि मानव की शुभ कामना नहीं रहेगी, विचारधारा महान नहीं होगी तो वह बस नहीं सकेगा इसलिए यज्ञोमयी मानो देखो **याग का नाम भी वसु है** और जितने भी सुक्रियाकलाप है उन सभी का नाम याग माना गया है। याग का अभिप्रायः कि सु-प्रेरणा, सु-धारणा, सु अपने में मानो रत्त हो जाना। मेरे पुत्रों! देखो वहीं हमारे यहां वसु कहा जाता है जो अपने में बसाने वाला है। अपने में बसाने वाला एक याग है, जो याग जितने भी प्रेरणावादी है सब यागाम भविते वह याग कर रहे है।

प्रजा-पुत्र

जैसे मेरी प्यारी माता है। माता अपनी प्रजा को जन्म देती है, अपने पुत्र को जन्म देती है। मानो दो प्रकार के वैदिक-साहित्य में कहीं भी मानो देखो अमृता ब्रह्मणा वर्णसुता वह पुत्र का इतना वर्णन नहीं आया जितना प्रजा का आता है। तो देखो यहां प्रजा

और पुत्र दो हैं, पुत्र का भी प्रायः कहीं-कहीं वर्णन आता है। **पुत्र उसे कहते हैं** जो माता और पिता के दोनों के दायित्व को अथवा उसकी एक जो विचारधारा है उसको जो अग्रणीय बनाता है। जैसे एक राजा का पुत्र है वह राजा देखो जब अपने पुत्र को राज दे करके चला जाता है तो वह पुत्र रह जाता है। तो पुत्र राजा की आज्ञा मानो उसके क्रियाकलापों को ऊर्ध्वा में गमन कराता है, उसी पद्धति को महान बना देता है और उसी पद्धति के आधार पर अपने राष्ट्रीय-याज्ञिक जीवन को व्यतीत करता है तो वह मुनिवरो! देखो पुत्र कहलाता है। और जब वह व्यापक विचारों वाला बन जाता है और जैसे अश्वमेघ है प्रजा मे मेघ का अपना कार्य-कलापों को वर्णन करता है तो वह अश्वमेघ याग करता हुआ प्रजा में अपने में मानो दोनों को एक ही तुल्य स्वीकार करता हुआ मानो देखो, **वह प्रजा कहलाती है** जो हृदय-ग्राही होता है, हृदय द्वन्द होता है। तो इसलिए माता जब प्रायः देखो अपने यहां प्रजा को जन्म देती है प्रजाम नम मे व्रतम देवा वह प्रजा से वह कहती है बाल्य तुझे प्रजावान बनना है, तुझे प्रजापति बनना है माता यही तो कहती है कि हे बालक! तू प्रजापति बन और प्रजापति का अभिप्रायः यह जो प्रजा का स्वामी हो, जो प्रजा का पति और नेतृत्व करने वाला हो उसका नाम प्रजापति कहलाता है। जो प्रत्येक प्रजा में अपने ही स्वरूप का दर्शन करता है वह प्रजापति कहलाता है, वह प्रजामयी कहलाता है। तो इसीलिए हमारे यहां देखो माता अपने में बसाने के क्रियाकलापों को याग में अपने जीवन को परिवर्तित कर देती है। और यह कहती है कि वसो वरणे तो मानो देखो वसु कहलाता है तो मुनिवरो! देखो वह माता यागिक बनी हुई यागों में परिणीत हो रही है जो प्रजा को जन्म देने वाली है पुत्र को मानो अपना दायित्व स्वीकार करके अपने में गतिवान बनती रहती है।

प्रजापति

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है मुनिवरो! देखो महाराजा प्रजापति, महाराजा प्रजापति के पिता का नामोकरण भी प्रजापति था। हमारे यहां बहुत पुरातन काल में बेटा! एक राष्ट्रीय प्रणाली का निर्माण हुआ था, बहुत समय हुआ जब इसका निर्माण हुआ। तो मानो देखो एक प्रजापति राजा होता है, राजाओं में एक प्रजापति राजा होता है, एक इन्द्र नाम का राजा होता है, एक विष्णु नाम का राजा होता है परन्तु देखो यहां प्रजापति का वर्णन है देखो प्रकरण के आधार पर प्रजापति उसे कहते हैं जो प्रजा नेतृत्व का स्वामी कहलाता है वह प्रजापति है। प्रजापति कि जो मानो देखो माता थी राजत्वा देखो उनकी जो प्रजापति की जो मानो माता थी वह यही कहा करती जब रूढ़ियों का पान करती थी हे बालक! तुझे प्रजापति बनना है, तुझे प्रजावान बनना है और प्रजापति बन करके तुझे हृदय-ग्राही बनना है। हे बालक! तुझे मानो देखो अमृतम ब्रह्मा तु प्रजापति बन करके और प्रजावान बन करके तू मानो देखो गतिवान बन करके अपने जीवन को महान बना। तो मानो देखो माता प्रजा मंगले मंगलेशवरी देखो उसकी माता का नाम सुषेण-केतु कहलाता था और वह सुषेण-केतू मानो सदैव यह कहती लोरियों का पान करा करके हे बाल्य! तुझे प्रजापति बनना है, तू प्रजावान है और प्रजावान बन करके तुझे प्रजा को ऊर्ध्वा में गमन कराना है। मेरे प्यारे! देखो वह बालक प्रजापति बना वही ब्रह्मचारी जो माता की लोरियों में जो आनन्दवत रहता है मानो देखो जो सान्तवना से अपनी माता की लोरियों का पान करता है वहीं तो प्रजापति बनता है। मेरे प्यारे! देखो माता कहती है, हे बाल्य तू पति, देखो प्रजापति बन, जब इस प्रकार मुनिवरो! देखो माता प्रेरणा देती रहती है तो वह उस माता का नाम वसु कहलाता है क्योंकि वह बसने वाले

विचार देती है। इसलिए उस राजा का नाम प्रजापति अथवा देखो वह प्रजावान् बनता है इसी का नाम प्रजापति कहलाता है। वह प्रजावान बनकर के देखो संसार को और राष्ट्र और समाज को ऊंचा बनाता है।

आत्मा भी वसु है

तो इसलिए मुनिवरो! देखो यह **जो आत्मा है यह प्रजावान है** देखो मानो आत्मा शरीर में विद्यमान रहती है यह प्रेरणा का द्योतक है। **आत्मा का नाम वसु है** आत्मा का नाम भी वसु कहलाता है क्योंकि वह आत्मा जब तक इस मानव के शरीर में विद्यमान है तो यह मानव वसु कहलाता है आत्मा भी मानो देखो गम्भीरता से वसु कहलाती है क्योंकि आत्मा ही तो बसाने वाली है। आत्मा यदि शरीर में नहीं रहेगा तो हम बस नहीं सकेंगे बेटा! जीवन विकृत हो जाएगा अन्धकार में परिणीत हो जायेंगे तो इसीलिए देखो आत्मा का नाम वसु है जब तक इस मानव के मानो देखो शरीर मे विद्यमान है मानो बेटा! प्रत्येक प्राणी-मात्र के हृदय में जब तक आत्मा विद्यमान है वह वसु बन रही है वह वसु कहलाती है। इसलिए वसुन्धरम ब्रह्मा वरणो वह्मे वसुता मानो देखो वह वसुन्धरा कहलाती है। हे मां! तू हमें अपने में बसाने वाली है और वसा करके तू पालन कर रही है। राजा का नाम भी वसुन्धरा कहलाता है क्योंकि वह भी प्रजा को अपने में बसाने वाला है। बेटा! मैं बहुत दुरी न जाना चाहता हूं विचार-विनिमय केवल यह क्या मुनिवरो! देखो **जो भी मानव सुप्रेरणा में जा रहा है वही वसु कहलाता है। यज्ञोमयी वसुभ ब्रहे** याग का नाम वसु है और वसुन्धम ब्रह्मा मानो देखो यह याग भी तो बसाने वाला है। मानो जितना भी प्रेरणा का द्योतक है वह याग है, जितनी भी सुन्दर प्रेरणा अर्न्तहृदय में जन्म देने वाली वह सब

प्रजापति कहलाती है। हे प्रजापति! तू राजा है और राष्ट्र में, तेरे में मानो राजा के राष्ट्र में शिक्षा-प्रणाली पवित्र होनी चाहिए। शिक्षा-प्रणाली पवित्रतम होती है तो मानो देखो राजा का राष्ट्र विशेष होता है। राजा के राष्ट्र में बुद्धिमान प्राणी जितने भी होते है उतना ही राष्ट्र ऊंचा बनता है, महान बनता रहता है और जहां देखो उसके राष्ट्र में अवृत ब्रह्मा ब्रहे मानो नहीं रहेगा तो मानो देखो मानव अपनी आभा में मानवीयता का मानो प्रसार करता रहेगा।

प्रजावान

तो विचार आता है बेटा! देखो **प्रजावान कैसे बनता है।** मुझे एक वाक स्मरण आ रहा है बहुत पुरातन काल का वाक है बेटा! जो मैंने कई कालों में उसे वर्णन किया है। मेरे प्यारे! देखो एक राजा थे जिनका नाम प्रजापति था और प्रजापति मानो देखो उनका नामोकरण तो कुछ और था परन्तु उसे प्रजावान कहते थे। उस प्रजावान के मानो देखो राजा के पुत्र था सुकेत नाम का पुत्र था और वह जो सुकेत नाम का पुत्र था वह बड़ा विचित्र और मानो देखो वह विद्या अध्ययन करता था। मेरे विचार में जब वह विद्या अध्ययन करता तो वह राष्ट्रीय-प्रणाली के ऊपर अध्ययन करता रहा। मेरे प्यारे! देखो ब्रह्मज्ञान के ऊपर अध्ययन करता रहा। एक समय बेटा! देखो वह पुत्र, राजकुमार बेटा! कहीं भ्रमण करते हुए मानो देखो एक ऋषि के आश्रम में पहुंच गया। जो मुनिवरो! देखो व्रेत विष्णु नाम के देखो ऋषि अमृत का पान करते थे जो अंगिरस कहलाते थे। जब मुनिवरो! देखो उनके द्वार पर पहुंचा तो उन्होंने कहा हे राजकुमार! हे पुत्र! तुम्हारा परिचय क्या है, तुम्हारा नामोकरण तुम कहां से कौन हो? उन्होंने कहा मेरा नाम निर्मोही है और मेरा नाम निर्मीही होने से मानो यही मेरा परिचय है। उन्होंने कहा पुत्र किस

के हो? उन्होंने कहा मेरे पिता का नाम भी निर्मोही है और राष्ट्र का नाम क्या, वह भी निर्मोही है और उन्होंने कहा मेरी मंगलम क्या भौजाई निर्मोही कहलाती है, प्रजा भी निर्मोही है। ऋषि ने कहा हे राजकुमार! निर्मोही तो वह प्राणी होता है जिसको किसी से मोह न हो वह तो निर्मोही कहलाता है और तुम मानो सर्वत्र राष्ट्र को निर्मोही कह रहे हो। उन्होंने कहा प्रभु! इसकी परीक्षा लीजिए। यह मेरा विषय नहीं है यह तो मानो देखो तुम्हारा विषय है प्रजा में इस प्रकार का अनुभव करो। मेरे प्यारे! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है क्या राजन नमम् देखो वह ऋषि ने उन राजकुमार को वहीं त्याग करके आश्रम में वह भ्रमण करते हुए राजा के द्वार पर पहुंचे प्रजावान के और उन्होंने उनका स्वागत किया। उस ऋषि ने कहा कि मेरा स्वागत क्या करते हो मानो मैं इस योग्य नहीं हूं। उन्होंने कहा नहीं, भगवन! पूज्य हो। उन्होंने कहा सम्भवे हे प्रभु! मैंने श्रवण किया तुम्हारे कोई पुत्र है। उन्होंने कहा मेरे पुत्र तो ऋषित् है परन्तु मुझे प्रतीत नहीं कि मैं पुत्र हूं या वह पुत्र है या वह प्रजा है मैं प्रजा हूं इस प्रकार का उसने उत्तर दिया मानो जैसे चक्रव्रती उत्तर होता है। उन्होंने कहा तो प्रभु! जो मैं उच्चारण करने जा रहा हूं उसको श्रावण करो। राजा ने कहा कि भगवन् उच्चारण कीजिए। कि तुम्हारा पुत्र उसके व्याध ने दो भाग कर दिए है और वह मेरे आश्रम में विद्यमान है मेरी इच्छा है कि उसका दाह कर दिया जाए। वह मेरे व्याध से उसको मानो देखो शरीर को मैंने स्थिर कर दिया है। राजा ने कहा प्रभु! आप तो **ऋषिवर** है, ब्रह्मवेत्ता है आप मेरा देखो अतिथि स्वीकार कीजिए और आप भगवन! देखो वह जो शरीर है ये आपको प्रतीत है कि यह शरीर क्या है? मानो शरीरमः देखो जब तक शरीर है तो आत्मा विद्यमान है जब तक वसु विद्यमान है तो शरीर गतिवान रहता है जब वसु चला जाता है तो यह मानव

शरीर शून्यता को प्राप्त हो जाता है और जिन मानो पंच-महाभूतो से इस पिण्ड का निर्माण हुआ है वह अपने-अपने अवयवों में प्रवेश कर जाते हैं अपने अपने स्वरूप में चले जाते है अग्नि-अग्नि में, जल-जल में अग्नि अमृतमः और देखो आपो अपने में रत्त हो जाएगा अमृतम ब्रह्मा वरसुतम उन्होंने कहा हे ऋषिवर! आप मेरे अतिथिपन को स्वीकार कीजिए यह जो शरीर है यह आत्मा का यह सिंह का भोज्य है उसे प्रदान कर दिया जाए। उन्होंने कहा चलो भई पिता को इतना विशेष मोह नहीं होता वह माता के समीप पहुंचे। माता ने भी ऋषि का स्वागत किया, जल पान उन्होंने कराया। जल पान कराने के पश्चात उन्होंने कहा सम्भूति ब्रह्मण व्रतम मानो हे! ब्रह्म व्रतो अप्रतम देवा उन्होंने कहा हे मातेश्वरी! कहिए ऋषिवर। उन्होंने कहा तुम्हारा एक पुत्र है जो मृत्यु को प्राप्त हो गया है और व्याध ने उसके दो भाग कर दिए है। मैंने उस व्याध को मानो देखो अभी स्थिर किया है और वह जो व्याध है वह अपने में देखो शरीर को अपना भोज्य बनाना चाहता है मेरी इच्छा यह है प्रभु क्या आप मानो उसका दाह कर दिया जाए। उन्होंने कहा हे भगवन् हे! अमृतम मानो देखो यह जो शरीर है यह आत्मा इससे निकल गया है आत्मा न किसी का पुत्र है न पुत्री है न यह आत्मा किसी का मानो देखो शिष्य है। यह आत्मा तो एक रस रहने वाली चेतना है और चेतना में रत्त रहने वाला यह शरीर है, हे भगवन! देखो जब चेतना तो रही नहीं वह शव रह गया है वह शरीर का भोग बन गया है वह उसका भोज्य पदार्थ बनकर के उसको पान कर देना और मानो देखो आत्मा नष्ट नहीं होता और जो संस्कारों का समूह है चित्त-मण्डल वह भी नष्ट नहीं होता तो प्रभु! मैं किसका दाह कर सकती हूं। मेरे प्यारे! ऋषि बड़े आश्चर्य में चकित हो गये और ऋषि जब आश्चर्य में चकित हो गये उन्होंने कहा अरे! यह तो बड़ा विचित्र है। मेरे

प्यारे! आगे देखो उन्होंने कहा तो चलो पत्नी को स्नेह होता है वह पत्नी के द्वार पर पहुंचे और पत्नी से कहा अमृतम और पत्नी ने उनका स्वागत किया और ऋषि से कहा कहो भगवन कैसे आगमन हुआ है। उन्होंने कहा हे देवी! मैं इसलिए आया हूं क्या तुम्हारा एक पति है वह मृत्यु को प्राप्त हो गया और पतनम् ब्रह्मा देखो वह सब सम्बन्ध बने हुए है। ऋषि से उन्होंने कहा प्रभु! पहले मेरे अतिथिपन को स्वीकार करो मैं इसका उत्तर देखो जब ही दे सकूंगी। उन्होंने अतिथिपने को स्वीकार किया। उन्होंने कहा हे प्रभु! मैंने यह अध्ययन किया है जब मैं गुरुओं के द्वारा अध्ययन करती थी मैंने अपने में यह अध्ययन किया कि संसार में मृत्यु किसी वस्तु की नहीं होती आत्मा की मृत्यु नहीं होती। संस्कार ज्यों के त्यों बने रहते है और यह शरीर पंच-महाभूतों से जो पिण्ड का निर्माण हुआ उसमें एक परमाणुओं का मिलान करते रहते है उसी से निर्माणीत कहलाते है परन्तु जब गुरुओं ने यह कहा कि आत्माम ब्रह्मे मृत्यु कोई वस्तु नहीं है तो प्रभु! मैं यह कैसे स्वीकार करूं। क्या मैं तुम्हारे वाक्यों को यथार्थ स्वीकार करू या महापुरुषों की जो इससे पूर्व हुए है। मेरे प्यारे! देखो अमृतम ब्रह्मा वह बड़े आश्चर्य में ऋषिवर उन्होंने कहा प्रभु! आप निद्वन्द हो करके रहिए वह शरीर में आत्मा नहीं है और देखो वह शरीर सिंह का भोज्य बन गया है वह मानो देखो उसका भोज्य बन जाने दीजिए। मेरे प्यारे! देखो ऋषि बड़े आश्चर्य चकित हो गये और वहां से भी उन्होंने गमन किया और भ्रमण करते बेटा! देखो भोजई के द्वारा पहुंचे। भौजई ने इसी प्रकार देखो उनका स्वागत किया। उन्होंने कहा देवी तुम्हें धन्य है। अमृतम ब्रह्मा देखो भोजनाम भू स्वयं ब्रहे भोजई ने कहा कहो ऋषिवर! किस प्रकार आगमन हुआ। ऋषि ने कहा देवी तुम्हारा एक विधाता वह मृत्यु को प्राप्त हो गया है और मेरे आश्रम में देखो व्याध ने उसके

दो भाग कर दिये है। मेरे प्यारे! भोजई ने कहा कि हे भगवन!, हे पितर!, हे आचार्य!, हे ब्रह्म के जानने वाले, ब्रह्म के परन्तु देखो बाल्य-काल में जब मैं अपनी माता की लोरियों का पान करती रहती थी तो मुझे स्मरण है माता यह कहा करती थी, क्या हे बालक! संसार में कोई रहस्य नहीं है यह बिना रहस्य का संसार है। मानो देखो कोई किसी वस्तु को दृष्टिपात करके शांत हो रहा है कोई किसी की दृष्टि को पान करके महान बन रहा है। परन्तु देखो आपको यह प्रतीत है कि हमारे आचार्यो ने माता ने यह वर्णन किया कि संसार में मानव शरीर और देखो शरीर को त्यागने का नाम देखो मृतक कहते है परन्तु वास्तव में यह मृतक बनता नहीं है, यह शब्द का आकार नहीं बना है मृतक रूप में परन्तु देखो यह जो मृत्यु शब्द है यह नहीं होता, यह है ही नहीं परन्तु मेरे विचार में तो, तो इसलिए मैं किसका दाह करूं और कौन संस्कार में मैं ले जा सकती हूं। मेरे पुत्रो! देखो वह आश्चर्य में चकित हो गये उसने कहा धन्यम ब्रह्मा वर्णसुतम आपयाम देवाम लोकाम वाचसुतम ऐसा उदगीत गा करके बेटा! अपने में मौन हो गई और मौन हो जाने के पश्चात उन्होंने कहा कहि असुतम, ऋषिवर ने कहा यह तो सभी निर्मोही है। पुत्री ने कहा मैं राजकुमारी हूं परन्तु देखो मैं इस वाक को स्वीकार नहीं करती की मृत्यु कोई वस्तु है वह तो शरीर का भोग्य पदार्थ है उसे वह भोग लेगा उसके उदर की पूर्ति हो जाएगी क्योंकि वह हिंसक प्राणी है। मेरे पुत्रो! देखो जब उन्होंने इस प्रकार कहा तो वह शान्त हो गये।

उन्होंने वहां से भी भ्रमण किया और भ्रमण करते हुए बेटा! उन्होंने देखो राजसी सभा एकत्रित की और राज-सभा एकत्रित करके उन्होंने न्यूनतम देकर के उन्होंने कहा कहो प्रजामा भूतम ब्रह्मे उसमें बुद्धिमानो का एक समूह एकत्रित हुआ और उसने कहा कहो भगवन!

अमृतम् कैसे आगमनम् ब्रहे असुतम कैसे हमें स्मरण कराया है। उन्होंने कहा कि मैं अवृतयो अवृता सम्यन ब्रहे कृतम मैं अपने में यह अनुभव कर रहा हूं क्या तुम्हारे राजा का एक पुत्र है जो मेरे यहां व्याध ने उसके दो भाग कर दिए है मेरी इच्छा ऐसी है कि तुम प्रजा हो राष्ट्र को मानो सजातीय बनाते हो मानो उस पुत्र का भी दाह करो। मेरे प्यारे! उनमें से प्रजावानों में से एक प्रजापति ने कहा श्वेतकेतु श्वेती प्रजा ने क्या हे भगवन! हम मानो तुम हमें मोह का, यह मोह की वार्ता क्यों प्रगट करा रहे हो। उन्होंने कहा नहीं मैं मोह की वार्ता नहीं प्रगट करा रहा हूं। उन्होंने कहा तो यह क्या है जो मानो देखो तुम मुझे उद्गीत गा रहे हो यह उद्गीत तुम्हें नहीं गाना चाहिए, **उद्गीत गाने है तो और मधुर होने चाहिए।** मेरे पुत्रो! देखो अमृतम आत्म ब्रहे आप मृत्यु के भय में क्यों इतने व्याकुल हो रहे है आपाम ज्योतम ब्रह्मा आप भगवन! आईये और हमें उपदेश दीजिए कि हम ब्रह्मज्ञानी कैसे बने। परन्तु यहां प्रत्येक मानव ब्रह्म का ही बखान करता है, राजा भी ब्रह्म का ही बखान कर रहा है। प्रातःकाल में हम देखो ब्रह्म का बखान करते रहते है, जीवन को शुक्ल-पक्ष में जाना चाहिए। मेरे पुत्रो देखो जब उन्होंने यह कहा कि सम्भूति ब्रह्मा वह प्रजाय देखो हम सब प्रजा है राजा की प्रजा है, अपने में प्रजावान है क्योंकि प्रजा भी जब बने है जब स्वयं हम अपने में प्रजापति बन गये है। राजा भी, हमारा राजा भी जब तक प्रजापति नहीं बना जब तक मानो देखों हम जैसे प्रजाम भूतम ब्रह्मा अपना वाक स्वीकार नहीं किया। तो विचार आता रहता है बेटा! इस प्रकार सम्भूति ब्रह्मा लोकाम देखो मेरी इच्छा यह है ऋषिवर आप अपने आश्रम को चले जाइये गमन कीजिए परन्तु देखो यहां किसी को इतना समय नहीं है कुछ चिन्तन में लगे हुए है कुछ प्रभु का चिन्तन कर रहे है कुछ मानो और चिन्तन हो रहा

है तो चिन्तन होते हुए अपने में न दृष्टिपात करके द्वितीयों में संसार को दृष्टिपात करना अज्ञानता कहलाई, यही तो अज्ञान है अज्ञानम् भूतम ब्रहमें जो अज्ञान की आभा में रहता है।

निर्मोही राष्ट्र

तो आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष चर्चा प्रगट नहीं कर रहा हूं केवल विचार-विनिमय यह क्या हम परमपिता-परमात्मा की अराधना करते रहें देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस सागर से पार होने का हम प्रयास करते रहे। तो आओ मेरे प्यारे! मैं बहुत दूरी नहीं जाना चाहता हूं विचार-विनिमय केवल यह कि प्रजा ने, सब ने कहा क्या भगवन! ब्रह्म-ज्ञान में कोई मृत्यु नहीं होती और अपने व्यक्तित्व में भी कोई मृत्यु नहीं होती यह मृत्यु का शब्द आपने कहा से देखो उच्चारण करने के पश्चात अपनी आभा में परिणीत हो गये। मेरे पुत्रो! देखो जब राजा ने राजम ब्रह्मे प्रजा ने यह कहा राज-ऋषि से कि जाओ अपने आश्रम में और यहाँ मानो देखो वह सिंह का भोजन है वह सिंह प्राप्त कर लेगा और हम तो मानो देखो निर्द्वन्द हो करके विचरण करते है हमें किसी प्रकार की न विडम्बना होती है, हम विडम्बना से रहित है, न मोह होता है इस मोह ममता से हम रहित है इसलिए हमारा जो राज्य है वह प्रजापति का कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो जहाँ प्रजा आनन्द से विचरने वाली, आनन्द से विश्राम गृह में हो और विश्राम ही मानो उनके जीवन का कर्तव्य नहीं बना हुआ हो। तो आओ मेरे प्यारे! देखो मैं अपने विचारो को देता हुआ दूरी न चला जाऊं मैं केवल अपनी आभा में आभाहित रहना चाहता हूं। मेरे पुत्रो! देखो मैं आज विशेष चर्चा न प्रगट करता केवल यह क्या प्रत्येक मानव को अपने जीवन में अपनी महानता की आवश्यकता रहती है। परन्तु देखो राजा ने अमृतम

ऋषि अब आश्रम में पहुंचे और आश्रम में जाने के पश्चात् उनका पुत्र देखो राजकुमार विद्यमान है। कहो ऋषिवर। हे राजकुमार तुम्हारा तो राष्ट्र ही निर्मोहियों का है परन्तु देखो माता भी, पिता भी वही वाणी बोल रहा है उसी वाणी का बखान माता कर रही है और माता की वाणी का बखान मेरे प्यारे! देखो अनन्य मोहस्वती देखो वह भी अपने में पाना कर रही है।

तो विचार आता है मेरे प्यारे! मैं विशेष विचार न देता हुआ केवल यह क्या हमें प्रत्येक मानव को अपने जीवन को विचारना है और वह सिंह राज का भोज्य हो गया शरीर ज्यों का त्यों रहा और देखो उसमें जो अवयव थे जल, अग्नि, तेज, वायु इसमें वह सब निकल गये अमृतम भूतम ब्रह्मा लोकाम वासुदेवात्वाम लोकाम! मेरे प्यारे! आज का हमारा यह वाक क्या कह रहा है हम परमपिता-परमात्मा कि अराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार-सागर से पार होने का प्रयास करे क्योंकि यही हमारा जीवन है। निर्मोही होना बहुत अनिवार्य है असुताम ब्रह्मे लोकाम वाच सुत। राजा का राष्ट भी वहीं पवित्र होता है बेटा! जो प्रजापतित्व में रहता है और प्रजापति उसे कहते है जो बाह्य-जगत और आन्तरिक-जगत को जो दोनों का समन्वय कर लेता है वही बेटा! देखो प्रजापति है, वही अपने में धारयामि बना हुआ है।

बेटा! आज मैं विशेष चर्चा नहीं। वेद-मन्त्र क्या कहता है, वेद मन्त्र यही कह रहा है जो सर्वनाम **ब्रह्मा लोकाम वसिसुता विश्वा धर्मणे** मेरे प्यारे! देखो जो अपनी प्रजा को धारण करता है बाह्य-जगत की और आन्तरिक-जगत को, दोनों को जो धारण करता रहता है **वही ध्रुव कहलाता है।** यह है बेटा! आज का हमारा वाक् आज के वाक्। उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हमारे जीवन में महानता आनी चाहिए और हम वसु को अपने में जानने वाले बने हम भी,

मानव भी वसु कहलाता है क्योंकि वह बसता है, बसाने वाला है और बसा करके उसका नाम देखो वसु कहा गया है। तो आज का वाक् अब यह समाप्त होने जा रहा है। **आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः कि मानव को निर्मोही रहना चाहिए, कर्तव्य का पालन करना चाहिए और राष्ट्रवाद को उन्नत बनाते इस सागर से पार होने का प्रयास करें,** अमृतम ब्रह्मा देवाम भूतम ब्रह्मे युवाअस्ते। अब वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन।

ओ३म् देवाम् आभ्याम तानु मन्था युवास्ते।
ओ३म् देवम् भ्रदानाम आपा रथम माना।

अच्छा भगवन्!

दिनांक १४-१-१९९२
स्थान : मकनपुर, गाजियाबाद।

॥ ओ३म् ॥

यज्ञ क्या है?

यज्ञ वह पदार्थ है जो मनुष्य का परमात्मा से मिलान कराता है। आज हमें यज्ञ करते हुए परमात्मा से मिलान करना है। आज यज्ञ करते हुए हमें सँसार की त्रुटियों को नहीं देखना है। भौतिक यज्ञ करते हुए आध्यात्मिक यज्ञ में सँलग्न हो करके परमात्मा से मिलान करना है। आज उस ब्रह्मा से मिलान करना है जिस ब्रह्मा ने सृष्टि को रचाया है।

मानव सँसार में केवल यज्ञ वेदी को रचा सकता है। जैसे परमपिता परमात्मा ने सृष्टि रूपी यज्ञ वेदी को उत्पन्न किया है। जिसमें नाना लोक-लोकान्तर हैं। परमात्मा ने ब्रह्मा बन करके इस सँसाररूपी यज्ञ के कर्मकाण्ड (नियम) को बना दिया जो आज तक चले आ रहे हैं और उस काल तक रहेंगे जब तक यह सृष्टि रहेगी। इसी प्रकार आज हमें यज्ञ के कर्मकाण्ड में इस प्रकार सँलग्न हो जाना है कि आज हम जो यज्ञ का विधान बना लेवें वह सँसार में अमर रहे। जिस प्रकार परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में सूर्य रूपी प्रकाश दिया और तब से यह प्रकाश चलता आ रहा है और उस काल तक रहेगा जब तक यह सृष्टि रहेगी। इसी प्रकार आज हमें यज्ञ के कर्मकाण्ड में इस प्रकार सँलग्न हो जाना है कि आज हम जो यज्ञ का विधान बना लेवें वह सँसार में अमर रहे। जिस प्रकार परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में सूर्य रूपी प्रकाश दिया और तब से यह प्रकाश चलता आ रहा है और उस काल तक चलता ही रहेगा जब तक यह सँसार रहेगा। इसी प्रकार आज हमें भी वह यज्ञ करना है।

आज से पूर्व काल में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि यज्ञ करो। ऐसा सुन्दर करो, ऐसी आन्तरिक भावनाओं से करो कि जिससे तुम्हारा

मिलान उस परमपिता परमात्मा से हो जाए। जिस प्रकार परमात्मा ने सृष्टि रूपी यज्ञ वेदी को उत्पन्न किया है उसी प्रकार आज तुम भी भौतिक यज्ञ को उत्पन्न करो जिससे ज्ञान और विज्ञान उत्पन्न होता है। जिससे हमें ज्ञान और विज्ञान की प्रेरणा मिलती है।

मुनिवरो देखो! महाराजा कृष्ण की एक वार्ता मेरे कँठ आ गई। भगवान कृष्ण ने महारानी रुक्मणी से यज्ञ के सम्बन्ध में क्या शब्दार्थ कहे? महाराजा अर्जुन ने महारानी द्रोपदी से क्या शब्दार्थ कहे? आज मुनिवरो यदि मैं सँसार की पोथी को लेकर चलता हूँ तो विचार आता है कि यज्ञ मनुष्य का क्या-से-क्या कर देता है। भगवान् कृष्ण से महारानी रुक्मणी ने एक समय प्रश्न किया कि यह जो आप यज्ञ करते हैं, क्यों करते हैं? इससे आपको क्या लाभ है? भगवान् कृष्ण ने कहा "दे देवी! मैं जो इस यज्ञ को कर रहा हूँ मैं चाहता हूँ कि मेरा मिलान परमात्मा से हो जाए। मेरी जो आन्तरिक भावना है, आन्तरिक जो तरंगें हैं वह परमात्मा से प्रेरित हो जाऐं। मेरी जो आन्तरिक भावना है, आन्तरिक जो तरंगें हैं वह परमात्मा से प्रेरित हों। परमात्मा से सहायता लेकर सँसार का कार्य त्यागपूर्वक करता चला जाऊँ। यह जो यज्ञशाला है यह त्याग की भावना देती है। मुझे यज्ञशाला में विराजमान हो करके कैसा त्याग मिलता है? जब होता और यजमान घृत आदि अग्नि में त्यागते हैं तो उन्हें ज्ञात नहीं कि तूने जो त्याग किया है इसका फल क्या होगा? हे देवी! आज मैं यज्ञ कर रहा हूँ परन्तु त्याग भावना से। हमने घृत, सामग्री आदि की जो भी आहुति दी अग्नि सबका त्याग कर देती है और उन्हें अन्तरिक्ष में रमण करा देती है। उसको देवता ग्रहण करते हैं। देवता उसको पान करके हमारे सुख की वृष्टि करते हैं।

आत्मिक यज्ञ

मुनिवरो! आज हमारे हृदय में यह त्याग की भावनाऐं ही होनी चाहिए। यज्ञ हमें त्याग देता है, यज्ञ हमें अच्छी आत्मिक भावनाऐं देता

है। मुनिवरो! इस भौतिक यज्ञ के साथ-साथ हमें आत्मिक यज्ञ भी करना है। वह आत्मिक यज्ञ क्या पदार्थ है?

आत्मिक यज्ञ, मुनिवरो! वह यज्ञ है जो हमें परमात्मा से मिलान कराता है। हम उस माता की गोद में विराजमान हो जाते हैं जो हमारा कल्याण करने वाली है। जिसको हमारे वेदों ने दुर्गा कहा है, माँ काली कहा है और बहुत से रूपों से पुकारा है। हम उच्चारण कर रहे थे क्या यज्ञाः भौतिक यज्ञाः। आज हमें आत्मिक यज्ञ भी करना चाहिए। होता हमारे कौन हैं? हमारी सामग्री क्या है? कौन अग्नि है? कौन हमारा ब्रह्मा है? इसके ऊपर हमें पूर्ण अनुसंधान करना चाहिए।

मुनिवरो! आज हमारा संकल्प व विकल्प आहुति देने वाला है जहाँ हम काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह सबकी सामग्री बना लेते हैं और ज्ञान रूपी अग्नि में इन सबको भस्म कर देते हैं, उस समय हमारा आत्मिक यज्ञ हो जाता है। इस यज्ञ का ब्रह्मा वह है जिसकी प्रेरणा से हम इस यज्ञ को करने के लिए विराजमान हो जाते हैं। बेटा! **आन्तरिक प्रेरणा हमारा आत्मा है** जो हृदय स्थल रूपी यज्ञशाला में विराजमान है। इस यज्ञ द्वारा उस आत्मा का सम्बन्ध परमात्मा से हो जाता है। जिस समय परमात्मा की गोद में जा बैठेंगे उस समय हमारे आनन्द का कोई अपार न रहेगा। मुनिवरों! हमारे आदि ऋषियों ने कहा है कि जब-जब यह आत्मा उस परमात्मा की गोद में विराजमान हो जाता है तो इसका जो नास्तिक परिवार है वह सब समाप्त हो जाता है और आस्तिक परिवार इसके द्वारा आ जाता है। अपने परिवार सहित यह परमात्मा में रमण कर जाता है। तो यह है मुनिवरो! आत्मिक यज्ञ जो आज हमें करना है। नाना इन्द्रियों के विषयों पर विचार करना है।

मुनिवरो! देखो, परमात्मा ने मानव का शरीर इसलिए बनाया है कि इसमें ओज और तेज हो। रसना परमात्मा ने दी इसमें ओज उत्पन्न

करो। यह रसना किस पदार्थ की इच्छुक है? वह है सरस्वती। मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे निर्णय कराया कि आजकल सँसार में मानव इस वाणी, इस रचना के पीछे इतना है कि अपनी मानवता को त्याग बैठा है। इस वाणी से तो हमें मानव बनना है। इस वाणी में हमें ब्रह्मा बनना है। इस वाणी से राम बनना है। इस वाणी से हमें कृष्ण बनना है। इस वाणी के ऊपर हमें विचार करना है।

आज देखो! दूसरों के भक्षणम् करने से हमारा यज्ञ सम्पन्न नहीं होगा। आज जब तुम्हारे द्वारा आहर और व्यवहार पवित्र होंगे तो तुम्हारी भावनाएँ भी पवित्र होंगी, उच्च विचार होंगे। अपनी काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह की सामग्री बनाकर ज्ञान रूपी अग्नि में भस्म कर देना है। भौतिक यज्ञ के साथ आत्मिक यज्ञ भी करो जिससे आज तुम्हारा कल्याण हो। कल्याण की भावनाऐं तुम्हारे द्वारा आएँ।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक समय मुझे आर्यों का प्रश्न निर्णय कराया। परमपिता परमात्मा की कृपा से मुझे वह समय देखने का सौभाग्य मिला है जब सर्वत्र सँसार में आर्यों की पताका लहराती थी। आर्यों की पताका किस काल में थी। भगवान राम के राष्ट्रों में आर्यों की पताका थी जिन्होंने अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाया। आज देखो! आर्यत्व क्या कहता है? मर्यादा को ऊँचा बनाओ। हमारे द्वारा मर्यादा क्या है? मुनिवरो हमारे द्वारा एक आन्तरिक भावना और भौतिकवाद है। दोनों को ऊँचा बनाना है। दोनों में ज्ञान और विज्ञान की प्रेरणा देनी है। यज्ञ की मर्यादा ज्ञान और विज्ञान से चलती है। आज सँसार आर्य बनना चाहता है। मैं तो यह कहा करता हूँ कि आर्यों का जीवन यज्ञमय होता है। दोनों प्रकार के यज्ञों का कर्म उनकी भुजाओं में होता है। उनके द्वारा 'ओ३म्' की पताका होती है, 'मर्यादा' की पताका होती है, 'यज्ञ' की पताका होती है, ''राष्ट्र'' की पताका होती है तो सँसार का कल्याण होता है।

आज यहाँ समालोचना करने से सँसार का उत्थान न होगा। दूसरों की त्रुटियाँ देखने से संसार का कल्याण न होगा। आज अपनी त्रुटियाँ देखने से सँसार का कल्याण होगा। मेरे प्यारे महानन्द जी कहेंगे कि गुरुजी यह क्या उच्चारण करने लगे अपने त्रुटियों को देखकर ही सँसार आर्य बनकर अपनी त्रुटियों पर विचार करेगा कि मेरे द्वारा कितनी त्रुटियाँ हैं, मैं कितना पापी हूँ तो उस समय मानव का कल्याण होगा। आगे चलकर आगे बढ़ते रहेंगे और सँसार को ऊँचा बना सकेगें। आज सँसार में हमें यह नहीं देखना कि यह मानव किस प्रकार का है, राष्ट्र किस प्रकार का है, सँसार में क्या हो रहा है? आज हमें यह देखना है कि मेरे द्वारा कितनी त्रुटियाँ हैं। क्या वेद की पोथियों को जानने में मेरा कल्याण होगा? कदापि नहीं। इस सम्बन्ध में आदि ऋषियों ने, महाराजा वशिष्ठ जैसे आचार्यों ने कहा है कि तुम वेद की पोथियों को जानो अवश्य, परन्तु अपनी आत्मा के भाव को भी जानो। यह जो काम, क्रोध, मद, लोभ व मोह आदि के मल विक्षेप आवरण हैं इन्हें ज्ञान अग्नि में भस्म करके शान्त करो।

पूज्यपाद-गुरुदेव

(यज्ञ प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व प्रवचन दिनाँक 7 नवम्बर, 1963)

॥ ओ३म् ॥

स्वस्तिवाचन

ओ३म् अग्निमीळे पुराहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् होतारं रत्नधातमम् ।१।

ऋ० १।१।१।१॥

ओ३म् स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये ॥२॥

ऋ० १।१।१।६॥

ओ३म् स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः।
स्वस्ति पूषा असुरो दधतु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥३॥

ऋ० १५।१९५।११॥

ओ३म् स्वस्तये वायुमुपब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः॥४॥

ऋ० १५।१५१।१२॥

ओ३म् विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये।
देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥५॥

ऋ० १५।१५१।१३॥

ओ३म् स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ॥६॥

ऋ० १५।१५१।१४॥

ओ३म् स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव ।
पुनर्ददताघ्नता जानता संगमेमहि ॥७॥

ऋ० १५।५१।१५ ॥

ओ३म् ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥

ऋ० १७।३५।१५ ॥

ओ३म् येभ्यो माता मधुपत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः ।
उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनुमदा स्वस्तये ॥९॥

ऋ० १७०।६३।३ ॥

ओ३म् नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः ।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥१०॥

ऋ० १७०।६३।४ ॥

ओ३म् सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम् ।
ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये ॥११॥

ऋ० १७०।६३।५ ॥

ओ३म् को वः स्तोम राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन ।
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥१२॥

ऋ० १७०।६३।६ ॥

ओ३म् येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः ।
त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ॥१३॥

ऋ० १७०।६३।७ ॥

ओ३म् य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः ।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ॥१४॥

ऋ० १७०।६३।८ ॥

ओ३म् भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेंऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम् ।
अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ॥१५॥

ऋ० १७०।६३।९ ॥

ओ३म् सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम् ।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये ॥१६॥

ऋ० १७०।६३।१० ॥

ओ३म् विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः ।
सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये॥१७॥

ऋ० १७०।६३।११ ॥

ओ३म् अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः ।
आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु णः शर्मयच्छता स्वस्तये॥१८॥

ऋ० १७०।६३।१२ ॥

ओ३म् अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि ।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ॥१९॥

ऋ० १७०।६३।१३ ॥

ओ३म् यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने ।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ॥२०॥

ऋ० १७०।६३।१४ ॥

ओ३म् स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यऽप्सु वृजने स्वर्वति ।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ॥२१॥

ऋ० ।१०।६३।१५॥

ओ३म् स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति ।
सा नो अमासो अरणे निपातु स्वावेशा भवतु देवगोपाः ॥२२॥

ऋ० ।१०।६३।१६॥

ओ३म् इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु
श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं
प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा वस्तेन ईशत माघशꣳसो ध्रुवाऽ
अस्मिन् गोपतौ स्यात बहवीर्यजमानस्य पशून्पाहि ॥२३॥

यजु० ।१।१॥

ओ३म् आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो
अपरीतासऽउद्भिदः । देवा नो यथा सदमिद् वृधेऽअसन्नप्रायुवो
रक्षितारो दिवेदिवे ॥२४॥

यजु० ।२५।१४॥

ओ३म् देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानांꣳ रातिरभि नो
निवर्त्तताम् । देवानांꣳ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु
जीवसे ॥२५॥

यजु० ।२५।१५॥

ओ३म् तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् ।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥२६॥

यजु० ।२५।१८॥

ओ३म् स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥२७॥

यजु० ।२५।१९॥

ओ३म् भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥२८॥

यजु० ।२५।२१॥

ओ३म् अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये ।
नि होता सत्सि बर्हिषि ॥२९॥

साम० पू० ।१।१॥

ओ३म् त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषांꣳ हितः ।
देवेभिर्मानुषे जने ॥३०॥

साम० पू० ।१।२॥

ओ३म् ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः ।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वोऽअद्य दधातु मे ॥३१॥

अथर्व० ।१।१।१॥

॥ ओ३म् ॥

The chief food on the Moon

Now the question is what is the chief food of those who live on the moon as compared to the cereal which is the chief food of the men living on the earth. There also the chief food is the cereal which is produced there and which consists mainly of the air and water elements and is suitable for those living there. Just as the cereal of this place consists mainly of the earthly particles, similarly the cereal of that place consists of the particles of air and water and is suited to them. The next question is how long it will take for the men of the earth to travel on the moon. The answer is that it will take time. Man will not be able to attain much success if he makes haste in this, because there lie many hurdles in the way, for example there are vey high mountains, and it will be very difficult to cross them. Of course, man will be successful in finding out the right path, but this will require time. However, I need not discuss it further.

Pujay Mahrishi Mahanand Jee

Pravachan–Dated 22 Aug. 1969
Place : Krishna Hall, Jorbagh
New Delhi

॥ ओ३म् ॥

When the man on earth will be able to see those living beings on the Moon ?

The man of today may enquire whether he will be able to see with or without his instruments those beings living on the moon and working in the offices there, and whether he will he able to travel on the moon with the help of his instruments. I had answered these questions long before that the man of the earth will be able to see those living on the moon with or even without the help of the instruments. But man will not be able to understand their speech.

I said yesterday that it is possible that man may manage to remain there alive for as long as six months if he carries with himself certain necessary elements from the earth, and it is not possible to live there for a longer period. However it is not impossible for a soul to live there in a subtle body. Such a soul can live even in the Sun.

As regards the journey of man to the Moon, I must say that I am highly pleased to know that man has reached the outskirts of the Moon and has gone up to the Mandhuk line. The scientists of today are also a kind of Yogis, who care little for their lives and are ready to embrace even Death in search of truth, material truth of course.

Similarly the Yogis also do not fear Death, in search of spiritual truth. Thus, both the scientists and the Yogis are fearless as far as death is concerned, and this is a source of pleasure to me.

Pujay Mahrishi Mahanand Jee

Pravachan–Dated 23 Aug. 1969
Place : Krishna Hall, Jorbagh
New Delhi

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1. यौगिक प्रवचन माला (भाग-1)	50.00	32. याग और तपस्या	45.00
2. यौगिक प्रवचन माला (भाग-2)	50.00	33. यागमयी-साधना	30.00
3. यौगिक प्रवचन माला (भाग-3)	50.00	34. यागमयी-सृष्टि	25.00
4. यौगिक प्रवचन माला (भाग-4)	50.00	35. याग-चयन	25.00
5. यौगिक प्रवचन माला (भाग-5)	50.00	36. दिव्य-रामकथा	100.00
6. Yogic Wisdom of Ancient Rishis	50.00	37. ज्ञान-कर्म-उपासना	25.00
7. वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00	38. दिव्य-ज्ञान	35.00
8. आत्म-लोक	25.00	39. महाभारत एक दिव्य दृष्टि	80.00
9. धर्म का मर्म	30.00	40. महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	25.00
10. शंका-निवारण	25.00	41. आत्म-उत्थान	30.00
11. यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व	40.00	42. तप का महत्व	30.00
12. आत्मा व योग-साधना	25.00	43. अध्यात्मवाद	25.00
13. देवपूजा	20.00	44. ब्रह्मविज्ञान	35.00
14. अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	100.00	45. वैदिक-प्रभा	30.00
15. अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	100.00	46. प्रकाश की ओर	35.00
16. अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	100.00	47. कर्तव्य में राष्ट्र	35.00
17. रामायण के रहस्य	35.00	48. वैदिक-विज्ञान	35.00
18. यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00	49. धर्म से जीवन	30.00
19. महाभारत के रहस्य	20.00	50. आत्मा का भोजन	35.00
20. अलङ्कार-व्याख्या	35.00	51. साधना	30.00
21. रावण-इतिहास	40.00	52. त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
22. महाराजा-रघु का याग	25.00	53. यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
23. वनस्पति से दीर्घ-आयु	25.00	54. यौगिक प्रवचन माला (भाग-6)	60.00
24. मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	30.00	55. स्वर्ग का मार्ग	40.00
25. चित्त की वृत्तियों का निरोध	25.00	56. यौगिक प्रवचन माला (भाग-7)	60.00
26. आत्मा, प्राण और योग	20.00	57. माता मदालसा	40.00
27. पञ्च-महायज्ञ	30.00	58. यौगिक प्रवचन माला (भाग-8)	60.00
28. अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	30.00	59. पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम् कर्म भूमि लाक्षागृह	10.00
29. याग-मञ्जूषा	25.00		
30. आत्म-दर्शन	25.00		
31. पुत्रेष्ठि-याग और मातृ-दर्शन	25.00		

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य संहिता, कैसेट्स, सी.डी. व डी.वी.डी. के रूप में निम्न स्थिानों पर उपलब्ध है:

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरवाना, जि. बागपत, (उ. प्र.)। दूरभाष : 01234-240395
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)। दूरभाष : 0131-2606414
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली। दूरभाष : 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली। दूरभाष : 011-26498737
5. श्री सुशील त्यागी, सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद। दूरभाष : 0120-4165802
6. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) दूरभाष : 9412002233
7. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट-मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला जे.पी. नगर (उ.प्र.) दूरभाष : 09412139333
8. श्री विवेक त्यागी, 16, अशोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड़, (उ.प्र.)। दूरभाष : 0122-2316196
9. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110,-मार्किट नोएड़ा, फेस-2, (उ.प्र.) दूरभाष : 9899228860, 9871367937
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबार हरियाणा। दूरभाषः 9910589486
11. सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सेक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएड़ा, (उ.प्र.) दूरभाष : 9313530505
12. श्री पूनम त्यागी, 96-A, सेक्टर-10 नोएड़ा, (उ. प्र.)। दूरभाषः 9311528383
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष : 011-23282088
14. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेड़ी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फर नगर (उ.प्र.)।
15. मैं. गोविन्द राम, हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष : 011-23977216
16. जवाहर बुक डिपो, बुढ़ाना गेट, आर्य समाज मेरठ शहर (उ. प्र.)।

मासिक सहयोग

श्री हरिराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी, सुपुत्रश्री-जयप्रकाशजी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री पूनम त्यागी, नोएड़ा	500 रुपये
श्री वी. पी. सिंह, वसुंधरा, गाजियाबाद	500 रुपये
डा० शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री नानकचन्द, देहरादून	200 रुपये
श्रीमती शशि गुप्ता, नोएड़ा,	125 रुपये
डा० ओ. पी. आर्य, आगरा	125 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़	100 रुपये
श्री राहुल शर्मा, बैंगलोर	100 रुपये
श्री पराग शर्मा, नोएड़ा	100 रुपये

सूचना

सभी आजीवन सदस्यों व अन्य मानुभावओं से नम्र निवेदन है कि उनके पास जो पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के प्रवचनों के कैसेट व विडियों कैसेट उपलब्ध हैं उसके विषय में निम्न पते पर सूचित करें जिससे कि उनको भी प्रकाशित किया जा सके।

वैदिक अनुसंधान समिति के आजीवन सदस्य बनने के लिए शुल्क 800 रु. और वार्षिक सदस्य बनने के लिए शुल्क 100 रु. है जिसको आप समिति के पते पर व निम्न पते पर डाक द्वारा भेजकर सदस्य बन सकते हैं।

डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मंत्री
ए-59 पंचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017
दूरभाष : (0)11-26498737

उद्‌बोधन

आज हमें वक्ता नहीं बनना चाहिए। आज तो हमें अपने जीवन में सँलग्न हो जाना है। जब तक हमारा स्वयं का जीवन ऊँचा न होगा तब तक सँसार में किसी मानव को ऊँचा नहीं बना सकते। मैंने आज से बहुत पूर्व काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रश्न किया था कि यह सँसार कैसे ऊँचा बन सकता है। उस समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक ही वाक्य कहा था 'यज्ञो मम् अस्ति यज्ञाः' जब मानव का जीवन यज्ञ जैसा पवित्र हो जाता है तो उसका जीवन इतना विचित्र बन जाता है कि उसके शरीर के कण-कण से उस यज्ञ की ज्योति प्रज्ज्वलित हो जाती है। मैंने अपने गुरुदेव से कहा कि प्रभु! आप भी 'यज्ञाः' उस समय उन्होंने कहा कि यदि मैं यज्ञ न करता तो मेरा जीवन, यज्ञमय न होता। तो आज गुरु अस्चित विश्वम् भोगी ना ना अस्ते' अहा! आज मुझे गुरु कोई न कह सकता था। जिज्ञासु बनने के पश्चात् गुरु की उपाधि प्राप्त होती है। तो मुनिवरो देखो यह यज्ञ है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

((यज्ञ प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व दिनाँक 7 नवम्बर, 1963)

वर्ष 40 : अंक : 477
जून 2012

मूल्यः
पाँच रुपये

प्रकाशक, मुद्रक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा वैदिक अनुसंधान समिति पंजी०
के लिए नवप्रभात प्रिटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर सी-38, शिवालिक
मालवीय नगर, नई दिल्ली-17 से प्रकाशित।
(अवै०) सम्पादक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष : 26498737

POSTED AT N.D.PS.O ON 10-6-2012